(25) हमारी राय में, याचिकाकर्ता का मामला पूरी तरह से कंवलजीत कौर के *मामले (ऊपर) के अनुपात* में आता है और इसलिए, उनके द्वारा की गई प्रार्थना के संदर्भ में राहत नहीं दी जा सकती है, क्योंकि 1974 के नियम निजी रूप से प्रबंधित स्कूलों के शिक्षकों को उच्च योग्यता प्राप्त करने पर उच्च वेतनमान देने का प्रावधान नहीं करते हैं।

(26) ऊपर बताए गए कारणों से, रिट याचिका खारिज कर दी जाती है।

आर.एन.आर

न्यायमूर्ति स्वतंत्र कुमार के समक्ष

तेलु राम- याचिकाकर्ता

बनाम

भूमि अधिग्रहण संग्राहक और अन्य- उत्तरदाता

2000 का सी.आर. नंबर 1529

4 जनवरी, 2001

भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894- धारा* 18 *और 31-भूमि का

अधिग्रहण-बिना विरोध के मुआवजे की प्रदत्त राशि की स्वीकृति-लगभग दो साल के बाद, वृद्धि के लिए धारा 18 के तहत* आवेदन *करने वाले दावेदार-धारा 18 (2) के तहत याचिका दायर करने के लिए छह सप्ताह की सीमा प्रदान करती है-कलेक्टर के पास देरी को माफ करने या निर्धारित अवधि की सीमा से परे* आवेदन *पर विचार करने की कोई शक्ति नहीं है-कलेक्टर ने आवेदन को समय द्वारा वर्जित के रूप में सही ढंग से खारिज कर दिया-बिना विरोध या वृद्धि का दावा करने के अपने अधिकार के प्रति पूर्वाग्रह के बिना पुरस्कृत मुआवजे को स्वीकार करने के बाद, दावेदार को अधिनियम की धारा 18 के तहत वृद्धि का दावा करने से भी वंचित कर दिया जाता है।

*(**जीत सिंह बनाम भूमि अधिग्रहण कलेक्टर, पीडब्ल्यूडी और बी एंड आर शाखा, हिसा**र, 1991 (2) हालिया राजस्व रिपोर्ट 270 और **धरम पाल बनाम कलेक्टर, भूमि अधिग्रहण शहरी विकास और अन्य, 1987** आर. एल. आर. 249 = 1987 हालिया राजस्व रिपोर्ट 356, प्रति इनक्यूरियम)*

यह अभिनिर्धारित किया गया कि 1894 के अधिनियम की धारा 31 की उप-धारा (2) के दूसरे परंतुक के तहत विधानमंडल ने अपने विवेक से अधिनियम की धारा 18 के तहत अधिक मुआवजे का दावा करने वाले

आवेदक पर एक स्पष्ट रोक लगा दी है कि उसने विरोध के अलावा राशि या उसका कोई हिस्सा प्राप्त किया था। धारा 18 के तहत आवेदन 26 अगस्त 1999 को दायर किया गया था जबकि याचिकाकर्ता को 30 जनवरी 1996 को बिना किसी विरोध के मुआवजा प्राप्त हुआ था।।दावेदार याचिकाकर्ता ने वृद्धि का दावा करने के अपने अधिकार के प्रति विरोध या पूर्वाग्रह के बिना अवार्ड को स्वीकार कर लिया है और वह 1894 के अधिनियम की धारा 18 के तहत वृद्धि का दावा करने से वंचित है।

(पैरास 4 &6)

***इसके अलावा,* यह अभिनिर्धारित किया गया कि धारा 18 की उप-धारा (2) के परंतुक (ए) की भाषा एक अवधिताकाल प्रदान करती है जिसके दौरान एक आवेदक मुआवजे में वृद्धि के लिए कलेक्टर के अवार्ड की तारीख से याचिका दायर कर सकता है। इस तरह का आवेदन कलेक्टर के अवार्ड की तारीख से छह सप्ताह के भीतर दायर किया जाना चाहिए।कलेक्टर कलेक्टर के अवार्ड की तिथि 19 मई, 1995 है।दावेदारों द्वारा 30 जनवरी, 1996 को बिना किसी पूर्वाग्रह के मुआवजा प्राप्त किया गया था, जबकि अधिनियम की धारा 18 के तहत आवेदन 26 अगस्त, 1999 को छह सप्ताह की निर्धारित अवधि से बहुत अधिक दायर**

किया गया था।इस तथ्य पर कोई विवाद नहीं हो सकता है कि कलेक्टर के समक्ष दायर आवेदन को समय से रोक दिया गया था और कानून कलेक्टर को देरी को माफ करने की कोई शक्ति नहीं देता है।इस प्रकार, अपरिहार्य परिणाम यह था कि आवेदन को समय द्वारा वर्जित के रूप में खारिज कर दिया गया और इस निष्कर्ष पर पहुंचने में कलेक्टर ने अधिकार क्षेत्र की कोई त्रुटि नहीं की।एक बार आवेदन समय से अधिक हो जाने पर, अधिनियम की धारा 18 (1) के तहत एक वैध आवेदन दाखिल करने की पूर्व शर्त पूरी नहीं होती है।

(पैरा 11 और 13)

अशोक खुबर,याचिकाकर्ता के वकील

एस. के. वशिष्ठ, अतिरिक्त महाधिवक्ता, हरियाणा, प्रत्यर्थी के वकील

निर्णय

स्वतंत्र कुमार, न्यायमूर्ति

(1) याचिकाकर्ता के विद्वान वकील ने दृढ़ता के साथ तर्क दिया कि भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 18, जिसे इसके बाद अधिनियम

के रूप में संदर्भित किया गया है, के तहत परिसीमन के आधार पर दावेदार द्वारा दायर आवेदन को खारिज करने का कलेक्टर के पास कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है।।इस तर्क को समग्र रूप से आगे बढ़ाते हुए उन्होंने **जीत सिंह बनाम भूमि अधिग्रहण कलेक्टर, पीडब्ल्यूडी *और बी* एंड *आर शाखा, हिसार***[1] *के मामले में इस अदालत की एकल पीठ के फैसले पर भरोसा किया।*

(2) यह निर्धारित करने के लिए कि क्या यह तर्क याचिकाकर्ता को कोई सार्थक परिणाम देगा या पूरी तरह से अड़ियल होगा, बुनियादी तथ्यों का संदर्भ आवश्यक होगा। आवेदक तेलू राम सहित अन्य सह-मालिकों की भूमि, गांव जठलाना, तहसील जगाधरी, जिला यमुनानगर की राजस्व संपत्ति में स्थित है, जिसका अधिग्रहण अवार्ड संख्या 3 दिनांक 19 मई 1995 के तहत किया गया था।आवेदक तेलू राम को अन्य सह-मालिकों के साथ, गाँव जथलाना, तहसील जगाधरी, जिला यमुना नगर की राजस्व संपदा में स्थित, अधिग्रहित *किया* गया था-19 मई, 1995 को अवार्ड संख्या 3 के माध्यम से।यह भूमि जथलाना में 66 KVA पावर

[1] 1991 (2) हालिया राजस्व रिपोर्ट 270

सब स्टेशन स्थापित करने के लिए अधिग्रहित की गई थी। मुआवजा की गणना प्रति एकड़ में 1,50,000.00 रुपये की दर पर की गई थी, 30% सोलेसियम के साथ और कानून की धारा 23(1-ए) के तहत अतिरिक्त राशि, 3 मई, 1994 से 19 मई, 1995 के प्रभाव से। इसके अलावा, व्यक्तिगत दावेदारों के अन्य दावों का भी निपटारा किया गया और सक्षम प्राधिकारी द्वारा निपटा गया।3 जनवरी, 1996 से 6 अगस्त, 1996 के बीच आवेदकों को मुआवजे का भुगतान किया गया था।दावेदारों को उनकी संबंधित भूमि के अधिग्रहण के लिए देय मुआवजे के रूप में दी गई राशि की सीमा से असंतुष्ट, याचिकाकर्ता सहित आवेदकों ने अधिनियम की धारा 18 के तहत संदर्भों को *प्राथमिकता दी।* भूमि अधिग्रहण कलेक्टर ने अपने आदेश दिनांक 27 अक्टूबर 1999 के तहत अधिनियम की धारा 31 का पालन करते हुए आवेदनों को समय से बाधित और यहां तक कि योग्यता के आधार पर खारिज कर दिया।। यह वह आदेश है जिसे एक आवेदक ने इस पुनरीक्षण याचिका में चुनौती दी है।

(3) अब विद्वान सहायक महाधिवक्ता, हरियाणा द्वारा उठाए गए तर्कों का उल्लेख करना उचित होगा।यह तर्क दिया गया कि कलेक्टर के पास अधिनियम की धारा 18 के प्रावधानों के अनुसार अवार्ड की घोषणा

की तारीख से छह सप्ताह की समाप्ति के बाद उन्हें प्रस्तुत किए गए आवेदन को खारिज करने का अधिकार क्षेत्र है और जो आवेदक अपने अधिकारों के प्रति पक्षपात के बिना और बिना विरोध के भुगतान कर रहे हैं, अधिनियम की धारा 18 के तहत दावा याचिका अधिनियम की धारा 31 के प्रावधानों से प्रभावित थी।

(4) अधिनियम की धारा 31 की उप-धारा (2) के दूसरे परंतुक के तहत विधानमंडल ने अपने विवेक से अधिनियम की धारा 18 के तहत अधिक मुआवजे का दावा करने वाले आवेदक पर एक स्पष्ट प्रतिबंध लगा दिया, यदि उसने विरोध के अलावा राशि या उसका कोई हिस्सा प्राप्त किया था।वर्तमान मामले में, मेरे सामने यह विवादित भी नहीं है कि यह अवार्ड 19 मई, 1995 को दिया गया था।धारा 18 के तहत आवेदन 26 अगस्त, 1999 को दायर किया गया था, जबकि याचिकाकर्ता को 30 जनवरी, 1996 को बिना विरोध के मुआवजा मिला था।इन निर्विवाद तथ्यों से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि आवेदक को बिना किसी विरोध के प्रारंभिक मुआवजे की राशि प्राप्त करने के बाद कलेक्टर के समक्ष अधिनियम की धारा 18 के तहत उच्च/बढ़े हुए मुआवजे का दावा करने से प्रतिबंधित किया जाना आवश्यक होगा।धारा 31 की उप-धारा (2) के

प्रावधान अस्पष्टता के लिए कोई गुंजाइश नहीं छोड़ते हैं और धारा का सरल अध्ययन उपरोक्त अपरिहार्य निष्कर्ष की ओर ले जाता है।

(5) यह कानून का स्थापित सिद्धांत है कि जहां धारा को स्पष्ट रूप से पढ़ने से दी गई परिस्थितियों में अधिकारों पर बाधा उत्पन्न होती है, वहां न्यायालय के पास निहितार्थ द्वारा व्याख्या अपनाकर ऐसी बाधा को उठाने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं होगा। **<u>।शेर सिंह बनाम भारत संघ[2]</u>** के मामले *में इस न्यायालय की एक पूर्ण पीठ ने* (2) पूर्वाग्रह और इसके प्रभाव के बिना राशि की स्वीकृति की याचिका पर विचार करते हुए कहा कि मुआवजे की राशि एक दावेदार द्वारा प्राप्त की जा सकती है, लेकिन अधिनियम की धारा 18 के तहत एक याचिका बनाए रखने के लिए विरोध के तहत। लॉर्डशिप्स ने आगे कहा कि अधिनियम की धारा 18 के तहत याचिका दायर करने के बहुत बाद मुआवजे की स्वीकृति एक आवश्यक निहितार्थ द्वारा पर्याप्त और ठोस विरोध था।

(6) इस प्रकार, पूर्ण न्यायपीठ का विचार स्पष्ट है कि अधिनियम की धारा 18 के तहत एक वैध आवेदन दायर करना अपने आप में एक

[2] 1982 PLJ 494

विरोध था और दावेदार का अधिक मुआवजा प्राप्त करने का अधिकार इस तरह के आवेदन दायर करने के बाद मुआवजे की स्वीकृति से निरस्त या छीन नहीं लिया जाएगा।वर्तमान मामले में स्वीकार किया जाता है कि भुगतान अधिनियम की धारा 18 के तहत याचिका को पूरा करने से दो साल से अधिक समय पहले बिना किसी विरोध के प्राप्त किया गया था।

(7) ***श्रीमती लक्ष्मीबाई नारायण पाटिल और एक अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य और एक अन्य***[3] के मामले में बॉम्बे उच्च न्यायालय की एक खंड पीठ ने यह भी विचार रखा कि कलेक्टर को अधिनियम की धारा 18 (1) के तहत याचिका दायर करने में देरी को माफ करने की कोई शक्ति नहीं है क्योंकि सीमा अधिनियम की धारा 5 के प्रावधान अधिनियम की धारा 18 (2) के प्रावधानों की ओर आकर्षित नहीं हैं। इस मामले में आगे यह संकेत दिया गया था कि कलेक्टर के पास सीमा द्वारा वर्जित के आधार पर निर्धारित अवधि से आगे दायर याचिका को अस्वीकार करने का पर्याप्त अधिकार क्षेत्र है।इस संबंध में **साधु सिंह (मृतक) का प्रतिनिधित्व प्रीतम सिंह और अन्य बनाम गुरु नानक विश्वविद्यालय और अन्य**[4] द्वारा *के मामले में इस न्यायालय* की *एकल पीठ के एक अन्य*

[3] ए.आई.आर. 1997 Bombay 212
[4] 1978 PLR 461

फैसले का भी उल्लेख किया जा सकता है और एक अन्य (4), जिसमें अदालत ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:•–

> "धारा 18 और धारा 31 (2), दूसरे परंतुक के संयुक्त पठन से यह स्पष्ट होता है कि अधिनियम की धारा 18 के तहत आवेदन को दो आवश्यक शर्तों को पूरा करना होगा।सबसे पहले, इसे समय के भीतर दायर किया जाना चाहिए और दूसरा, मुआवजे की राशि को या तो स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए था या विरोध के तहत स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए था; यदि इन दोनों शर्तों में से कोई भी पूरी नहीं होती है, तो याचिका पर विचार नहीं किया जा सकता है।वर्तमान मामले में, जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, हालांकि याचिका समय के भीतर थी, फिर भी याचिकाकर्ता द्वारा मुआवजे की राशि को बिना विरोध के स्वीकार कर लिया गया था।नतीजतन याचिका रखरखाव योग्य नहीं था और इसे भूमि अधिग्रहण कलेक्टर द्वारा सही ढंग से खारिज कर दिया गया था।इसलिए, पुनरीक्षण याचिका में कोई योग्यता नहीं है और इसे लागत के साथ खारिज कर दिया जाता है।"

(8) **अश्विनी कुमार ढींगरा बनाम पंजाब राज्य**[5] के मामले में *भारत के माननीय* सर्वोच्च *न्यायालय ने अपीलार्थियों* के दावे पर विचार किया क्योंकि उन्होंने विरोध के तहत मुआवजे को स्वीकार कर लिया था।माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट रूप से कानून को स्पष्ट किया कि धारा 18 के तहत एक याचिका को बनाए रखने के लिए, पूर्ववर्ती शर्त मुआवजे की अस्वीकृति या विरोध के तहत दिए गए मुआवजे की स्वीकृति थी।उनके अधिपत्य निम्नानुसार थेः–

> "भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 18 के प्रावधानों से यह स्पष्ट है कि इच्छुक व्यक्ति, उसे संदर्भ का उपाय लेने में सक्षम बनाने के लिए ऐसा केवल तभी कर सकता है जब वह अवार्ड स्वीकार नहीं करता है।यह दिखाने के लिए कि संबंधित व्यक्ति ने अवार्ड स्वीकार नहीं किया था, दावेदार केवल विरोध के तहत मुआवजे को स्वीकार करते हैं क्योंकि एक बार अवार्ड के अनुसरण में दिया गया मुआवजा बिना विरोध के स्वीकार कर लिया जाता है, तो संबंधित व्यक्ति भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 18 में उल्लिखित विभिन्न मामलों के

[5] (5) ए.आई.आर. 1992 एससी 974

लिए संदर्भ का अपना अधिकार खो सकता है।

(9) वर्तमान मामले के स्वीकृत तथ्यों और ऊपर उल्लिखित कानून को ध्यान में रखते हुए, मुझे राज्य की ओर से उठाए गए तर्क को स्वीकार करने में कोई संकोच नहीं है।दावेदार याचिकाकर्ता ने वृद्धि का दावा करने के अपने अधिकार के विरोध या पूर्वाग्रह के बिना मुआवजे को स्वीकार कर लिया है, वह अधिनियम की धारा 18 के तहत वृद्धि का दावा करने से वंचित है।

<u>सीमा का प्रश्नः–</u>

(10) इस संबंध में याचिकाकर्ता के विद्वान वकील के अंतिम तर्क की ओर ले जाने वाली और इसके तार्किक अंत तक ले जाने वाली विश्लेषणात्मक जांच और संश्लेषण इसके निश्चित प्रभाव को दिखाएगा जो क़ानून की व्याख्या को नियंत्रित करने वाले बुनियादी सिद्धांतों का उल्लंघन होगा।धारा 18 के प्रावधान इस प्रकार हैंः–

> "18. **रेफरेंस टू कोर्ट** –(1) कोई भी इच्छुक व्यक्ति जिसने अवार्ड स्वीकार नहीं किया है, कलेक्टर को लिखित आवेदन द्वारा यह अपेक्षा कर सकता है कि मामला कलेक्टर द्वारा

न्यायालय के निर्धारण के लिए भेजा जाए, चाहे उसकी आपत्ति भूमि के माप पर हो, भूमि की राशि, क्षतिपूर्ति, वे व्यक्ति जिन्हें यह देय है, या इच्छुक व्यक्तियों के बीच मुआवजे का विभाजन।

(2) आवेदन में वे आधार बताए जाएँगे जिन पर अवार्ड पर आपत्ति की जाती हैः

बशर्ते कि ऐसा प्रत्येक आवेदन किया जाएगा, -

(a) यदि इसे बनाने वाला व्यक्ति कलेक्टर के अवार्ड की तारीख से छह सप्ताह के भीतर उस समय कलेक्टर के समक्ष उपस्थित था या उसका प्रतिनिधित्व हो रहा था जब उसने अपना अवार्ड दिया थाः

(b) अन्य मामलों में, धारा 12, उप-धारा (2) के तहत कलेक्टर से नोटिस प्राप्त होने के छह सप्ताह के भीतर, या कलेक्टर के अवार्ड की तारीख से छह महीने के भीतर, जो भी अवधि पहले समाप्त हो जाए।"

(11) धारा 18 की उप-धारा (2) के परंतुक (ए) की भाषा एक सीमा

की अवधि प्रदान करती है जिसके दौरान एक आवेदक दिए गए मुआवजे को बढ़ाने के लिए कलेक्टर के अवार्ड की तारीख से याचिका दायर कर सकता है।इस तरह का आवेदन कलेक्टर के अवार्ड की तारीख से छह सप्ताह के भीतर दायर किया जाना चाहिए।विधानमंडल ने अपने विवेक से कलेक्टर को देरी को माफ करने या उक्त तिथि से छह सप्ताह से अधिक के आवेदन पर विचार करने की कोई शक्ति निहित नहीं की है, भले ही कोई आवेदक निर्धारित अवधि से अधिक आवेदन दायर करने के लिए पर्याप्त कारण दिखा सके।अधिनियम की धारा 18 के तहत याचिका कलेक्टर के समक्ष इस प्रार्थना के साथ दायर की जानी चाहिए कि उन प्रश्नों का निर्धारण करने के लिए न्यायालय को निर्देश दिया जाए जो उत्पन्न हो सकते हैं लेकिन अधिनियम की धारा 18 (1) के प्रावधानों द्वारा नियंत्रित हैं। यदि याचिकाकर्ता के वकील का निवेदन स्वीकार कर लिया जाता है, तो यह धारा 18 की उप-धारा (2) के प्रावधानों को निरर्थक, अप्रभावी या अनावश्यक।बना देगा।

(12) यह कानून का स्थिर सिद्धांत है कि कानून को उसका सामान्य और सच्चा अर्थ दिया जाना चाहिए और हर प्रावधान को स्वतंत्र रूप से कार्य करने दिया जाना चाहिए, उस क्षेत्र में जिसके लिए विधायिका द्वारा

ऐसा निश्चित किया गया है। विधायिका ने अपने विवेक में, एक ओर, सीमा की अवधि प्रदान की जिसके भीतर अधिनियम की धारा 18 के तहत आवेदन प्रस्तुत किया जाना था, और दूसरी ओर, कलेक्टर को देरी को माफ करने की कोई शक्ति निहित नहीं थी। यह अनिवार्य रूप से अवधिताकाल को उसकी सभी कठोरताओं के साथ लागू करने के विधायी इरादे को इंगित करता है।इसका स्पष्ट कारण यह प्रतीत होता है कि भूमि मालिकों को अपनी भूमि के अधिग्रहण के लिए शीघ्रता से मुआवजा मिलना चाहिए। जल्द से जल्द बढ़े हुए मुआवज़े का दावा करने के लिए भी, उन्हें आगे कदम उठाने में सक्षम होना चाहिए ।धारा की भाषा स्पष्ट रूप से इंगित करती है कि कानून निर्माता चाहते हैं कि दावेदार अपने अधिकारों के प्रति समान रूप से सतर्क रहें और सीमा की निर्धारित अवधि के भीतर मुआवजे में वृद्धि के लिए अपने दावे दर्ज करें, सीमा का निर्धारण एक दोतरफा हथियार है और आवेदक के पक्ष में काम करता है यदि वह इसके त्वरित निपटान के लिए समय के भीतर आह्वान करता है।यदि नहीं तो यह उस अधिकार को छीन लेता है जो अन्यथा दावेदारों को उपलब्ध होता।

(13) जैसा कि वर्तमान मामले में पहले ही देखा जा चुका है कि

कलेक्टर को अवार्ड देने की तिथि 19 मई, 1995 है। दावेदारों द्वारा 30 जनवरी, 1996 को बिना किसी पक्षपात के मुआवजा प्राप्त किया गया था, जबकि अधिनियम की धारा 18 के तहत आवेदन 26 अगस्त, 1999 को छह सप्ताह की निर्धारित अवधि से बहुत अधिक दायर किया गया था।इस तथ्य पर कोई विवाद नहीं हो सकता है कि कलेक्टर के समक्ष दायर आवेदन को समय से रोक दिया गया था और कानून कलेक्टर को देरी को माफ करने की कोई शक्ति नहीं देता है।इस प्रकार अपरिहार्य परिणाम यह था कि आवेदन को समय द्वारा वर्जित बताते हुए खारिज कर दिया गया और इस निष्कर्ष पर पहुंचने में कलेक्टर ने अधिकार क्षेत्र की कोई त्रुटि नहीं की।एक बार आवेदन समय से परे हो जाने पर, अधिनियम की धारा 18 (1) के तहत एक वैध आवेदन दाखिल करने की पूर्व शर्त संतुष्ट नहीं होती है।

(14) इस स्तर पर इस विषय पर केस लॉ को संदर्भित करना उचित हो सकता है। **पंजाब राज्य बनाम कैसर हेनान बेगम**[6] *के मामले* में, *उच्चतम न्यायालय के* अधिपति अधिनियम की धारा 18 की उप-धारा (2) के परंतुक (बी) में "कलेक्टर के अवार्ड की तारीख से छह महीने" की

[6] (6) ए.आई.आर. 1963 एससी 1604

अभिव्यक्ति से संबंधित थे। उस मामले में पक्षों द्वारा यह स्वीकार किया गया था कि अधिनियम की धारा 12 (2) के संदर्भ में दावेदारों को अवार्ड के बारे में कभी सूचित नहीं किया गया था। नतीजतन, अधिपतियों ने माना कि छह महीने की अवधि की गणना ज्ञान की तारीख से की जाएगी और यह माना कि "ज्ञान को अवार्ड की आवश्यक सामग्री से संबंधित होना चाहिए।इन सामग्रियों को या तो वास्तव में या रचनात्मक रूप से जाना जा सकता है।यदि अवार्ड अधिनियम की धारा 12 (2) के तहत किसी पक्ष को सूचित किया जाता है, तो पक्ष को स्पष्ट रूप से अवार्ड की सामग्री के ज्ञान के साथ तय किया जाना चाहिए, चाहे वह इसे पढ़ता हो या नहीं।इसी तरह, जब कोई पक्ष या तो व्यक्तिगत रूप से या अपने प्रतिनिधि के माध्यम से अदालत में उपस्थित होता है जब कलेक्टर द्वारा अव्रद बनाया जाता है, तो यह माना जाना चाहिए कि वह अवार्ड की सामग्री जानता है।"

(15) उपरोक्त सीमा के प्रश्न का निर्णय करते समय अधिपतियों ने यह प्रश्न छोड़ दिया कि क्या सिविल न्यायालय को अवधिताकाल के प्रश्न में जाने का अधिकार क्षेत्र है यदि कलेक्टर द्वारा धारा 18 (1) के तहत एक आवेदन पर संदर्भ दिया जाता है जो समयसमय द्वारा वर्जित

था। इस सवाल को अधिपतियों ने इस तथ्य के बावजूद खुला छोड़ दिया कि अधिपतियों ने एक ओर बॉम्बे उच्च न्यायालय और दूसरी ओर इलाहाबाद उच्च न्यायालय के फैसले के बीच संघर्ष देखा।

(16) धारा 18 (2) परंतुक (ए) के प्रावधान कलेक्टर को अधिनियम की धारा 18 (1) के तहत अदालत में एक संदर्भ को अस्वीकार करने के लिए किसी भी अनिश्चित शर्तों के अधिकार क्षेत्र में निहित करते हैं यदि ऐसा आवेदन निर्धारित सीमा की अवधि से परे था। कलेक्टर द्वारा धारा 18(1) के तहत किसी आवेदन पर विचार करना पहले से ही एक वैध आवेदन को मानता है जिसका अनिवार्य रूप से मतलब है कि आवेदन समय के भीतर होना चाहिए। ।कलेक्टर को आवश्यक निहितार्थ द्वारा संदर्भ दाखिल करने में देरी को माफ करने की शक्ति निहित नहीं की गई है, जहां उनके पास समयबद्ध याचिका पर विचार करने का मुश्किल से ही अधिकार क्षेत्र है।धारा 18 (2) के साथ पठित धारा 18 (1) का अर्थ ऐसा होना चाहिए जो प्रावधानों को पूरी तरह से अप्रभावी या अप्रचलित करने के बजाय इन प्रावधानों के अंतर्निहित कारण को आगे बढ़ाए ।

(17) यदि कलेक्टर द्वारा धारा 18 (1) के तहत एक आवेदन पर एक संदर्भ दिया जाता है जो अधिनियम की धारा 18 (2) के तहत सीमा

की निर्धारित अवधि से परे है, तो भी रेफरेंस कोर्टके पास हमेशा सीमा के आधार पर दावा याचिका को खारिज करने का अधिकार क्षेत्र होगा।यह इतना स्पष्ट है क्योंकि सीमा का अनुरोध किसी भी स्तर पर गैर-आवेदक द्वारा लिया जा सकता है।इस दृष्टिकोण का समर्थन करने का एक अन्य कारण यह है कि धारा 18 (1) के तहत कलेक्टर को प्रस्तुत किया गया प्रत्येक आवेदन कानून के अनुसार एक वैध और उचित आवेदन होना चाहिए।एक आवेदन जिसे समय द्वारा स्पष्ट रूप से प्रतिबंधित किया गया है, उसे वैध आवेदन नहीं कहा जा सकता है।कलेक्टर में निहित अधिकारिता की अवधारणा डाकघर की गतिविधि तक ही सीमित नहीं है, बल्कि यह कलेक्टर द्वारा दो आवश्यक अवयवों पर दिमाग के वास्तविक अनुप्रयोग पर आधारित है-पहला यह कि आवेदन सीमा की निर्धारित अवधि के भीतर है और दूसरा, यह अधिनियम की धारा 18 (1) के प्रावधानों में निर्धारित रेफरेंस कोर्टके लिए विचार का सवाल उठाता है। जबकि रेफरेंस कोर्टस भी प्रश्नों का निर्धारण करेगा और सीमा के प्रश्न का निर्णय करने का अधिकार क्षेत्र भी होगा, वहाँ कलेक्टर के पास सीमा की याचिका पर विचार करने और धारा 18 (1) के दायरे और दायरे के भीतर प्रश्नों को रेफरेंस कोर्ट को भेजने का सीमित अधिकार क्षेत्र है।।इस

मायने में, कलेक्टर का अधिकार क्षेत्र न्यायालय में निहित अधिकार क्षेत्र की तुलना में संकीर्ण है।

(18) **मोहम्मद हसनुद्दीन बनाम महाराष्ट्र राज्य**[7] के मामले में भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित कानून के मद्देनजर इस प्रश्न पर और अधिक विस्तार से चर्चा करने की आवश्यकता नहीं है, जिसमें इसे निम्नानुसार माना गया था –

> "धारा 18 के तहत संदर्भ देने की कलेक्टर की शक्ति इस प्रकार उसमें निर्धारित शर्तों द्वारा सीमित है, और एक शर्त परंतुक में पाई जाने वाली सीमा के संबंध में शर्त है।
>
> धारा 18 में निर्धारित शर्तें सार के मामले हैं और उनका पालन कलेक्टर की संदर्भ शक्ति के लिए एक पूर्ववर्ती शर्त है, जैसा कि न्यायमूर्ति चंदावरकर ने री भूमि अधिग्रहण अधिनियम (उपर्युक्त) में उचित रूप से देखा है।हमारा विचार है कि शर्तों की पूर्ति, विशेष रूप से सीमा के संबंध में, वे शर्तें हैं जिनके अधीन कलेक्टर की संदर्भ देने की शक्ति मौजूद है।तदनुसार

[7] ए.आई.आर. 1979 एससी 104

यह अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए कि धारा 18 की उप-धारा के परन्तुक द्वारा निर्धारित समय के भीतर संदर्भ के लिए आवेदन करना।(2) यह एक अनिवार्य शर्त है।कलेक्टर द्वारा वैध संदर्भ के *लिए नहीं।*

विचार से, यह इस प्रकार है कि अधिनियम के तहत कार्य करने वाला न्यायालय विशेष अधिकारिता का एक न्यायाधिकरण होने के नाते, यह देखना उसका कर्तव्य है कि धारा 18 के तहत कलेक्टर द्वारा उसे दिया गया संदर्भ उसमें निर्धारित शर्तों का पालन करता है ताकि न्यायालय को संदर्भ सुनने की अधिकारिता दी जा सके।इन सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, हम अब्दुल करीम के मामले (ए. आई. आर. 1963 ऑल 556) (एफ. बी.) (ऊपर) में इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून के बयान को स्वीकार करने के लिए बेहद अनिच्छुक होंगे।"

"यदि कोई आवेदन किया जाता है जो समय के भीतर नहीं है, तो कलेक्टर के पास रेफरेंस देने की शक्ति नहीं होगी।अपनी शक्ति की सीमाओं को निर्धारित करने के लिए, यह स्पष्ट है कि कलेक्टर को यह

तय करना होगा कि दावेदार द्वारा प्रस्तुत आवेदन समय के भीतर है या नहीं और धारा 18 में निर्धारित शर्तों को पूरा करता है।भले ही कलेक्टर द्वारा कोई रेफरेंस गलत तरीके से दिया गया हो, फिर भी अदालत को रेफरेंस की वैधता निर्धारित करनी होगी क्योंकि किसी रेफरेंस को सुनने के लिए अदालत की अधिकारिता धारा 18 के तहत किए जा रहे उचित रेफरेंस पर निर्भर करती है और यदि रेफरेंस उचित नहीं है, तो रेफरेंस को सुनने के लिए अदालत में कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है।यह इस प्रकार है कि यह देखना न्यायालय का कर्तव्य है कि धारा 18 में निर्धारित वैधानिक शर्तों में इसका अनुपालन किया गया है और यह स्वयं को संतुष्ट करने से प्रतिबंधित नहीं है कि जिस रेफरेंस को सुनने के लिए कहा जाता है वह एक वैध रेफरेंस है।यह केवल एक वैध रेफरेंस है जो न्यायालय को अधिकार क्षेत्र देता है और इसलिए, न्यायालय को खुद से यह सवाल पूछना पड़ता है कि क्या उसके पास रेफरेंस को स्वीकार करने का अधिकार क्षेत्र है। कलेक्टर द्वारा न्यायालय में धारा 18 के तहत रेफरेंस के मामले में अधिकार क्षेत्र के प्रश्न का निर्णय लेने में, न्यायालय निश्चित रूप से अपील न्यायालय के रूप में कार्य नहीं कर रहा हैःयह केवल स्वयं को संतुष्ट करने के प्राथमिक कर्तव्य का निर्वहन कर रहा है कि एक रेफरेंस

जिसे तय करने के लिए कहा जाता है, उस अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार एक वैध और उचित रेफरेंस है जिसके तहत इसे बनाया गया है।यह एक बुनियादी और प्रारंभिक कर्तव्य है जिससे कोई भी न्यायाधिकरण संभवतः बच नहीं सकता है।इसलिए, न्यायालय के पास यह तय करने का अधिकार क्षेत्र है कि क्या रेफरेंस उप-अनुभाग के लिए परंतुक द्वारा निर्धारित अवधि से परे किया गया था।(2) अधिनियम की धारा 18 और यदि यह पाया जाता है कि इसे इस प्रकार बनाया गया था, तो संदर्भ का उत्तर देने से इनकार कर दें।"

(19) **हरियाणा राज्य बनाम मान सिंह और अन्य**[8] (8) के मामले *में इस न्यायालय की एक पूर्ण पीठ ने मोहम्मद हसनुद्दीन* (उपरोक्त) के मामले में उच्चतम न्यायालय के फैसले का पालन करते हुए उपरोक्त सिद्धांत को निम्नलिखित भाषा में दोहरायाः–

> "समान रूप से यह स्पष्ट नोटिस की मांग करता है कि उपरोक्त मामले में लॉर्डशिप्स ने **स्वतंत्र लैंड एंड फाइनेंस प्राइवेट लिमिटेड** के मामले में पूर्ण पीठ के फैसले को स्पष्ट रूप से मंजूरी दे दी है और स्पष्ट शब्दों में यह माना गया

[8] ए.आई.आर. 1979 P&H 230

कि इसके विपरीत निर्णय अच्छे कानून का निर्धारण नहीं करते हैं और इन्हें खारिज कर दिया गया है।।हमारे समक्ष यह विवादित नहीं किया गया है कि वर्तमान मामले में, रेफरेंस का दावा निर्धारित अवधि से परे किया गया था और आगे यह कि प्रतिवादी भूमि मालिकों को बिना विरोध के मुआवजे को स्वीकार करने के कारणों से प्रस्तुत करने से रोक दिया गया था।"

(20) कानून के उपरोक्त अच्छी तरह से प्रतिपादित सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, जीत सिंह (उपरोक्त) के मामले में इस न्यायालय का एकल पीठ का निर्णय याचिकाकर्ता के मामले का समर्थन नहीं करेगा। जीत सिंह (उपरोक्त) के मामले में इस अदालत के विद्वान एकल न्यायाधीश ने **धरम पाल बनाम कलेक्टर भूमि *अधिग्रहण शहरी* विकास *और अन्य*[9]**, *के मामले पर भरोसा किया था।*

[9] 1987 RLR 249 = 1987 RRR 356

धरम पाल का मामला फिर से उसी विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिया गया निर्णय था।हालांकि, उक्त दो फैसलों को पढ़ने से ऐसा प्रतीत होता है कि पूर्ण पीठ के फैसले के साथ-साथ माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले को उनके संज्ञान में नहीं लाया गया था। इसलिए, जीत सिंह के मामले (सुप्रा) में तय किया गया कानून मान्य नहीं हो सकता । वास्तव में जीत सिंह के मामले में विद्वान एकल न्यायाधीश की टिप्पणी और धरम पाल के मामले (उपरोक्त) को पूर्व-निर्दिष्ट निर्णयों के मामले में आकस्मिकता के अनुसार माना जाना चाहिए।आपराधिक विविध मामले में इस न्यायालय की एक खंड पीठ। *आपराधिक विविध. क्रमांक 7268 of 1997 in 1997 की आपराधिक अपील संख्या 312-डीबी* में, *उच्चतम न्यायालय के विभिन्न निर्णयों पर* विचार करने के बाद निम्नानुसार अभिनिर्धारित की गईः–

> "हमारा विचार है कि पूर्व में बताए गए विभिन्न निर्णयों को इस मामले से निपटने वाली माननीय पीठ के संज्ञान में नहीं लाया गया था। इस परिणामस्वरूप, हमें लगता है कि stare decisis के स्थिर सिद्धांतों को देखते हुए, हमें ऐसा लगता है कि माननीय बेंच द्वारा की गई टिप्पणियाँ per incuriam हैं । इस संबंध में **सहायक संपदा अधिकारी, मद्रास बनाम**

श्रीमती. वी. देवकी एनिमल, मद्रास *जे.टी 1994(7) S.C. 543 और* ***भगवान दास अरोड़ा बनाम प्रथम अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, रामपुर और अन्य*** *A.I.R. 1983 सुप्रीम कोर्ट 954* के मामले में उच्चतम न्यायालय के फैसले का संदर्भ देना उचित *होगा।।इस संबंध में* **फितरात रजा खान बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य*** *1982(2) एस सी सी449* के मामलों का भी उल्लेख किया जा सकता *है।* ***बचन सिंह बनाम पंजाब राज्य आदि****, ., 1982(3) एस सी सी24,* ***और ए. आर. अंतुले बनाम आर. एस. नायक और, दूसरा****, 1988(2) एस सी सी602.*

माननीय पीठ की टिप्पणियाँ हमें धारा में कुछ ऐसा प्रस्तुत करती प्रतीत होती हैं जो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 389 के प्रावधानों में कानून द्वारा अभिप्रेत या प्रदान नहीं किया गया है।इस स्तर पर **करनाल सुधार न्यास, करनाल बनाम श्रीमती प्रकाश बंटी *जे.टी 1995 (5) एस.सी.151."*** के मामले में उच्चतम न्यायालय के फैसले का संदर्भ देना भी प्रासंगिक हो सकता है।इसलिए और सबसे बड़े सम्मान के साथ, मैं जीत सिंह (ऊपर) और धरम पाल (ऊपर) के मामलों में इस

न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा व्यक्त किए गए विचार का पालन करने में असमर्थ हूं।अश्विनी कुमार ढींगरा (ऊपर) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा और मान सिंह (ऊपर) के मामले में इस न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा कानून के प्रश्न का स्पष्ट और अंत में उत्तर दिया गया है।

(21) उपरोक्त चर्चा का अपरिहार्य परिणाम यह है कि राज्य की ओर से उठाई गई दोनों दलीलों को स्वीकार किया जाना चाहिए, जबकि याचिकाकर्ता की ओर से अस्वीकार किये जाने योग्य हैं।।परिणामस्वरूप, पुनरीक्षण याचिका खारिज कर दी जाती है।हालाँकि, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, पक्षों को अपनी लागत वहन करने के लिए छोड़ दिया जाता है।

आर.एन.आर

न्यायमूर्ति ए. बी. एस. गिल और न्यायमूर्ति वी. एस. अग्रवाल, के

समक्ष

साधु सिंह और अन्य. याचिकाकर्ता

बनाम

हरियाणा राज्य और अन्य उत्तरदाता

सी.डब्ल्यू.पी. 2000 का नंबर 15941

16 जनवरी, 2001

***भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद* 226- लेवल 3 पर वरिष्ठ सामान्य श्रेणी के उम्मीदवारों की वरिष्ठता को नजरअंदाज करते हुए त्वरित वरिष्ठता के आधार पर आरक्षित श्रेणी के उम्मीदवारों को लेवल 4 (अधीक्षक) तक पदोन्नति देना-** *सामान्य श्रेणी के अभ्यर्थी कैच-अप के सिद्धांत के आधार पर पहले से पदोन्नत, आरक्षित श्रेणी की तुलना में निचली श्रेणी में अपनी मूल वरिष्ठता पुनः प्राप्त कर रहे - आरक्षित श्रेणी के उम्मीदवारों को गलत तरीके से पदोन्नत किया गया, त्वरित, आरक्षित श्रेणी के उम्मीदवारों के आधार पर लेवल 3 पर सामान्य श्रेणी के उम्मीदवारों को उनके ऊपर रखकर अवर सचिवों के रूप में पदोन्नत किया गया। -तृतीय श्रेणी के स्तर से परे हरियाणा में कोई आरक्षण नीति नहीं - उपाधीक्षक के स्तर पर पकड़ के नियम के आधार पर सामान्य श्रेणी के उम्मीदवार आरक्षित श्रेणी के उम्मीदवारों से वरिष्ठ हो जाते हैं*

। याचिकाकर्ताओं को उपाधीक्षक के पद पर वापस किया जाए । हालाँकि, अधीक्षक के रूप में उनकी पदोन्नति सुरक्षित रही, क्योंकि वह 1 मार्च, 1996 से पहले की गई थी- रिट खारिज, याचिकाकर्ताओं को अधीक्षक के पद पर वापस करने का आदेश बरकरार रखा गया

अभिनिर्धारित किया कि राज्य ने उपाधीक्षक स्तर तक आवश्यक आरक्षण दिया है।अजीत सिंह-2 बनाम पंजाब राज्य, 1999 (7) एससीसी 209 के मामले में *निर्णय* के संदर्भ में, 1 मार्च, 1996 तक पदोन्नत किए गए लोग सुरक्षित हैं और कोई आरक्षण नहीं है।कोई आरक्षण नहीं हो सकता है लेकिन आगे कोई पदोन्नति नहीं है कि वे कल्पना के किसी भी विस्तार से सामान्य उम्मीदवारों पर वरिष्ठता का दावा कर सकते हैं।यदि आरक्षण के सिद्धांत की गलत धारणा के कारण, कुछ आरक्षित श्रेणी के उम्मीदवारों को 1 मार्च, 1996 के बाद पदोन्नत किया गया था, तो उन्हें नीचे आना पड़ा और उस पद पर वापस आना पड़ा जिसके बारे में वे चाहते हैं

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण

प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

सिद्धांत रॉयल

प्रशिक्षु न्यायिक पदाधिकारी

(Trainee Judicial Officer)

जगाधरी, हरियाणा